मुनिश्री प्रणम्यसागरजी महाराज के सान्निध्य में श्री दि. जैन मंदिर सतना म.प्र. में दिनांक 1-2 अक्टूबर 2023 को आयोजित राष्ट्रीय विद्वत्संवाद

आचार्यश्री विद्यासागरजी महाराज के शिक्षानीति के उद्देश्य एवं प्रासंगिकता

- डॉ. आशीष जैन आचार्य, शाहगढ़
(राष्ट्रपति सम्मानित)

पृष्ठभूमि -

शिक्षा का सार्वभौमिक उद्देश्य चरित्र निर्माण और श्रेष्ठ जीवन है। जहाँ निष्ठा, नैतिकता, मानवीयता, विवेक, हिताहित का ज्ञान, राष्ट्र के प्रति समर्पण और चारित्र की प्रमुखता होती है, वही शिक्षा उपयोगी सिद्ध होती है। शिक्षा को विविध रूपों और आयामों में स्थापित करने के लिए प्राचीन-अर्वाचीन ऋषि-मुनियों ने, शिक्षाविदों ने, विद्वानों ने एवं शिक्षकों ने अपनी महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन किया है। शिक्षा एक ऐसा दीपक है जो स्वयं प्रकाशित होते हुए अपने आसपास का समस्त अंधकार दूर करता है। आज वर्तमान में युग में शिक्षा का उद्देश्य और प्रासंगिकता के भाव बदल गए हैं। जिस शिक्षा से रोजगार उपलब्ध होने की गारंटी हो, उसे सर्वोत्तम शिक्षा के रूप में समाहित किया जा रहा है, चाहे वह शिक्षा चरित्र निर्माण करती हो या नहीं, इससे कोई अंतर नहीं पड़ता है। ऐसे में, इस विपरीत शिक्षा पद्धति में सार्थकता के सूत्रों को पिरोने के लिए वर्तमान में अनेक ऋषि-मुनि, शिक्षाविद एवं शिक्षकगण कार्य कर रहे हैं। उन्हीं में देश को ही नहीं अपितु सम्पूर्ण विश्व को अहिंसा, चरित्र और जीवन निर्माण की मोतियों की माला को बनाने वाले संत शिरामणि दिगम्बर जैन आचार्यश्री विद्यासागरजी महाराज का नाम सर्वोपरि है। शिक्षा और शिक्षा के आयामों के लेकर जितना गहन चिंतन आपका है अन्यत्र दुर्लभ मिलता है। तभी तो भारत शासन ने राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में आचार्यश्री विद्यासागरजी महाराज को विशेष परामर्शक के रूप में स्थान दिया है। उनकी कहीं अनेकानेक बातों को एनईपी 2020 में सम्मिलित किया गया। जिसमें मातृभाषा में शिक्षण, कौशल विकास की शिक्षा माध्यमिक कक्षाओं के साथ एवं प्राच्य भाषाओं में शिक्षण आदि अनेक विषयों को एनईपी 2020 में स म्मिलित किया गया। यहाँ हम ऐसे महामना के शिक्षानीति के विषय में भावों को संयोजेंगे, जिससे उन भावों से प्रेरित होकर मानवीय मूल्यों को एक नई दिशा प्राप्त हो सके। नैतिक मूल्यों के साथ शिक्षा के सार्वभौमिक दृष्टिकोण पर तीखी दृष्टि रखने वाले एवं शिक्षा की शक्तियों की परख को समझाने के लिए आचार्यश्री विद्यासागरजी महाराज सरीखा अन्य व्यिक्त्व दुर्लभ है।

सामान्य जीवन परिचय - आपका पूर्व नाम श्री विद्याधर अष्टगे था। आपका जन्म स्थान सदलगा, जिला बेलगाँव (कर्नाटक) है। आपकी जन्मतिथि शरदपूर्णिमा, १० अक्टूबर १९४६ है। आपके पिता श्री मल्लप्पा अष्टगे एवं माता श्रीमती मन्ती अष्टगे है। आपकी मातृभाषा कन्नड़ है एवं शिक्षामाध्यम भी

कन्नड़ रहा है। आपकी मुनिदीक्षा आषाढ़ शुक्ल पंचमी, ३० जून १९६८ अजमेर राज. में हुई थी। आपके दीक्षागुरु महाकवि दिगम्बराचार्यश्री ज्ञानसागरजी महाराज है। आपको आचार्य पद २२ नवम्बर, १९७२ नसीराबाद अजमेर राजस्थान में आपके गुरु के द्वारा ही प्रदत्त किया गया। आप बहुभाषा विद हैं, जिसमें आपको कन्नड़, मराठी, हिन्दी, प्राकृत, संस्कृत, अपभ्रंश, अंग्रेजी, बंगला आदि अनेक भाषाओं का परिपक्व ज्ञान है। आप धर्म-दर्शन विज्ञ, साहित्यकार, सिद्धान्तवेत्ता, आध्यात्मिक प्रवचनकार, भारतीय संस्कृति के मर्मज्ञ, राष्ट्रीय चिंतक, जैन मुनि संहिता के तपस्वी साधक आदि अनेक विशेषताओं को धारण करने वाले महान् साधक हैं। आपकी प्रेरणा से माता-पिता, बडे.भाई, दो छोटे भाई, दो छोटी बहिनें भी मोक्षमार्ग के साधक बने हैं और सहस्राधिक उच्चशिक्षित बाल ब्रह्मचारी शिष्य-शिष्यायें मोक्षमार्ग में संलग्न हुये हैं।

व्यक्तित्व वैशिष्ट्य - श्रमणाकाश के ध्रुवतारे - आचार्यश्री विद्यासागरजी महाराज भारत भूमि की पावन धरा पर एक ऐसे व्यक्तित्व के रूप में अवतरित हुए हैं, जिन्होंने न केवल अपने स्वयं के आचरण को ऊँचाईयाँ दी हैं, अपितु जन-सामान्य के आचारण को ऊँचाईयाँ देने में अपना महत्त्वपूर्ण योगदान निभाया है। एक ओर जहाँ आचरण की पराकाष्ठा को स्पर्श करते हुये उनके परमाणु विद्यमान हैं, वहीं दूसरी ओर राष्ट्र भक्ति और राष्ट्र भावना से ओतप्रोत होकर राष्ट्र के लिये गहन चिन्तन के ऐसे बिन्दु निःसृत किये हैं, जिनके परिपालन से निश्चित ही राष्ट्र विकास के चरम तक पहुँचेगा। आचार्यश्री विद्यासागर जी केवल जैन जगत् के लिये ही नहीं अपितु सम्पूर्ण भारतभूमि और विश्व के लिये एक ऐसा नाम है, जिसने मानवीय मूल्यों के प्रति सजग चेतना को प्रस्फुटित किया है। जीव मात्र की दया के भावों को जन-जन के मानस तक स्थापित करने के महत्त्वपूर्ण को साधा है, जिसने सम्पूर्ण विश्व में उनकी एक बहुत बड़ी शिष्य परम्परा, चाहे वह मुनि-संतों के रूप में हो, त्यागी-व्रतियों के रूप में या फिर विद्वत्मनीषियों के रूप में हो, श्रावकों के रूप में या फिर विश्व के प्रत्येक मानवीय शक्ति के रूप में ही क्यों न हो, उसे स्थापित किया है। कठोर तपश्चर्या, संघ-संचालन, समाज और राष्ट्र के लिये नित नवीन-नवीन चिंतन; ये सब उनके जीवन के वे पहलु हैं, जिनसे राष्ट्र गौरवान्वित हो रहा है।

अंतिम तीर्थंकर भगवान महावीर की दार्शनिक पीठिका पर अनेक जैनाचार्यों ने समय-समय पर जीवन विज्ञान से संबंधित अनेक विध काव्य, कलाविधाओं से संपोषित साहित्य रचकर भारतीय संस्कृति को विश्व पटल पर विशिष्ट पहचान दी है।

उसी परम्परा में २०वीं-२१वीं शताब्दी के साहित्य जगत में एक नये उदीयमान नक्षत्र के रूप में जाने-पहचाने जाने वाले शब्दों के शिल्पकार, अपराजेय साधक, तपस्या की कसौटी, आदर्श योगी, ध्यानध्याता-ध्येय क पर्याय, कुशल काव्य शिल्पी, प्रवचन प्रभाकर, अनुपम मेधावी, नव नवोन्मेषी प्रतिभा के धनी, सिद्धान्तागम के पारगामी, वाग्मी, ज्ञानसागर के विद्याहंस, महावीर के प्रतिबिम्ब, महाकवि, दिगम्बराचार्य श्री विद्यासागरजी की आध्यात्मिक छवि के कालजयी दर्शन, दर्शक को आनन्द से भर देता है।

सम्प्रदाय मुक्त भक्त हो या दर्शक, पाठक हो या विचारक, आबाल-वृद्ध, नर-नारी उनके बहुमुखी चुम्बकीय व्यक्तित्व-कृतित्व को आदर्श मानकर उनकी शिक्षाओं को अपने जीवन में उतारकर अपने आपको धन्य मानते हैं।

माता-पिता की द्वितीय सन्तान किन्तु अद्वितीय कन्नड़ भाषी बालक विद्याधर की होनहार छवि को देख पिताजी ने कन्नड़ भाषा के विद्यालय में पढ़ाया। हिन्दी-अंग्रेजी भी सीखी, आत्मा के दिव्य आध्यात्मिक संस्कार वयवृद्धि के साथ-साथ स्वयं जागृत होने लगे। ९ वर्ष की उम्र में जैनाचार्य शान्तिसागरजी के कथात्मक प्रवचनों से वैराग्य का बीजारोपण हुआ और धर्म-अध्यात्म में रुचि बढ़ती गई तथा २० वर्ष की उम्र में घर-परिवार के परित्याग का कठिन असिधारा व्रत ले निकल पड़े शाश्वत सत्य का अनुसन्धान करने के लिये।

जो धरती/काष्ठ के फलक पर आकाश को ओढ़ते हैं। यथाजात बालकवत् निर्विकारी, अनियत विहारी, अयाचक वृत्ति के धनी, भक्तों के द्वारा दिन में एक बार दिया गया बिना नमक-मीठे के, बिना हरी वस्तु के, विना फल-मेवे के सात्त्विक आहार दान ही लेते हैं।

राजस्थान के अजमेर जिले के उपनगर मदनगंज-किशनगढ़ में सन् १९६७ में आपने सर्वप्रथम आचार्यश्री ज्ञानसागरजी महाराज के दर्शन किये, दर्शन पाकर आप इतने अभिभूत हुये कि आपने उनके समक्ष निवेदन किया कि हे आचार्य भगवन्! मैं आपके चरणों में बैठकर अध्ययन करना चाहता हूँ और जिनमार्ग में आगे बढ़ना चाहता हूँ। तब आचार्यश्री ने कहा - बहुत साधक आते हैं, पर स्थिर कोई नहीं रहता। तब आपने आचार्यश्री से कहा - हे भगवन्! मैं आजीवन वाहन में बैठने का त्याग करता हूँ। अब मैं यहाँ स्थिर रहकर आत्मसाधना करूँगा। तब गुरुकृपा के प्रसाद से ३० जून १९६८ को अजमेर में आपको मुनिदीक्षा से सुशोभित किया गया। आप दिन में एक ही बार आहार ग्रहण और उसी समय जल लेते हैं। आप अयाचक वृत्ति के धनी हैं। आपने सदा के लिये नमक, मीठे, हरी सब्जियों, फल, मेवे आदि का त्याग कर दिया है, आपके आहार अत्यंत ही सात्त्विक होते हैं। सदा पैदल गमन करते हैं। चाहे कितनी अधिक ठंडी हो परन्तु ओढ़नी के लिये आकाश का ही सहारा होता है, अन्य कोई भी वस्तु नहीं लेते। चाहे कितनी भी गर्मी हो कभी भी पंखा, कूलर, एसी का उपयोग नहीं करते हैं। एक करवट से रात्रि में विश्राम करते हैं। तीनों समय सामायिक करते हैं, अधिक से अधिक मौन रहते हैं। एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाने पर, हाथ उठाने पर या अन्य कोई भी हलन-चलन होने पर आप सबसे पहले पिच्छी से मार्जन करते हैं तदुपरान्त ही आगे कदम रखते हैं। आप हर दो माह में केशलोंच करते हैं अर्थात् दाढ़ी-मूछ-सिर के बालों को हाथों से उसी प्रकार से उखाड़ देते हैं, जैसे हम घास-फूस उखाड़ देते हैं। आजीवन अखण्ड ब्रह्मचर्य का पालन करते हैं। जीवमात्र के प्रति दया के परिणाम रखते हैं। आजीवन स्नान नहीं करने का संकल्प है, फिर भी आपके शरीर की कान्ति आज भी पवित्र-सुगंधित दैदीप्यमान हो रही है।

आपके दिव्य तेजोमय आभा मण्डल के प्रभाव से उच्च शिक्षित युवा-युवतियों ने युवावस्था के प्रारंभ से ही आपके श्रीचरणों में सर्वस्व सर्मपण कर दिया। जिनमें भारत के १० राज्यों के युवक-युवतियों को १२० दिगम्बर मुनि, १७२ आर्यिकायें, ६४ क्षुल्लक, ३ क्षुल्लिकायें, ४६ एलक की दीक्षा देकर मानव जन्म की सार्थक साधना करा रहे हैं। इनके अतिरिक्त आपके निर्देशन में सहस्रार्ध बाल ब्रह्माचारी भाई-बहिन साधना के क्रमिक सोपानों पर साधना कर रहे हैं। आपकी सन्निधि में ३० से अधिक साधकों ने सल्लेखना पूर्वक समाधिमरण कर जीवन क उद्देश्य को सार्थक किया है।

साहित्य सेवा-

१. आपने प्राचीन जैनाचार्यों के २५ प्राकृत-संस्कृत ग्रन्थों का हिन्दी भाषा में पद्यानुवाद किया।

२. आपने राष्ट्रभाषा हिन्दी में प्रेरणादायक युगप्रवर्तक महाकाव्य मूकमाटी का सर्जन कर साहित्य जगत् में चमत्कार कर दिया। जिसे साहित्यकार फ्यूचर पोयॅट्री एवं श्रेष्ठ दिग्दर्शक के रूप में मानते हैं। मूकमाटी के दो अंग्रेजी रूपान्तरण, दो मराठी रूपान्तरण, एक कन्नड़, एक बंगला, एक गुजराती रूपान्तरण हो चुका है। एवं उर्दू व जापानी भाषा में अनुवाद का कार्य चल रहा है। प्राकृत महाकाव्य पर अनेक स्वतंत्र आलोचनात्मक ग्रन्थों के अतिरिक्त ४ डी लिट्, २२ पीएचडी, ७ एमफिल, २ एमएड और ६ एमए के लघु शोधप्रबंध लिखे जा चुके हैं और लिखे जा रहे हैं।

३. आपने नीति-धर्म-दर्शन-अध्यात्म विषयों पर संस्कृत भाषा में ७ शतक और हिन्दी भाषा में १२ शतकों का सृजन किया है।

४. आपने संस्कृत और हिन्दी के साथ-साथ कन्नड़, बंगाली, अंग्रेजी, प्राकृत और जापानी में भी रचनायें की। जो साहित्य जगत् में आपकी अद्भुत प्रतिभा का द्योतक है।

भारतीय संस्कृति के गौरव को बढ़ाते हुये उन्होंने भारत देश के राजस्थान, उड़ीसा, बंगाल, महाराष्ट्र, उत्तरप्रदेश, मध्यप्रदेश, छत्तीसगढ़ आदि अनेक राज्यों की लगभग ५० हजार किलोमीटर की पैदलयात्रा की है, जो कि भारतवर्ष का यह आदर्श है।

आपने भारतनिर्माण में अपनी महत्त्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन करते हुये एक जीवन्त उदाहरण प्रस्तुत किया है, जिसके परिणामस्वरूप निम्न राष्ट्रनिर्माण की द्योतक परियोजनाओं को मूर्त रूप मिल सका है -

१. भारत में भारतीय शिक्षा पद्धति लागू हो।

२. अंग्रेजी नहीं भारतीय भाषा में व्यवहार हो।

३. छात्र-छात्राओं की शिक्षा पृथक् हो।

४. इण्डिया नहीं भारत का सूत्र अपनाओ।

५. नौकरी नहीं व्यवसाय करो।

६. चिकित्सा व्यवसाय नहीं सेवा है।

७. स्वरोजगार को सम्बर्धित करो।

८. बैंकों के भ्रमजाल से बचो और बचाओ।
९. खेतीबाड़ी सर्वश्रेष्ठ।
१०. हथकरघा स्वालम्बी बनने का सोपान।
११. भारत की मर्यादा साड़ी।
१२. गौशालायें जीवित कारखाना।
१३. माँस निर्यात देश पर कलंक।
१४. शत-प्रतिशत मतदान हो।
१५. भारतीय प्रतिभाओं का निर्यात रोका जाए।

संचालित उपक्रम –

१. आपकी प्रेरणा एवं आशीर्वाद से ७२ गौशालायें भारत के पाँच राज्यों में संचालित है।
२. भाग्योदय तीर्थ धर्मार्थ चिकित्सालय सागर म.प्र. (चिकित्सा में सेवा के लिये)
३. प्रशासनिक प्रशिक्षण केन्द्र जबलपुर(सुशासन-प्रशासन के लिये)
४. प्रतिभा स्थली, जबलपुर म.प्र., डोंगरगढ़ छत्तीसगढ़, ललितपुर उ.प्र., रामटेक महाराष्ट्र (बालिका शिक्षा के लिये)
५. पूरी मैत्री जबलपुर (लघु उद्योग – गरीब एवं विधवाओं के लिये)
६. पं. भूरामल सामाजिक सहकार न्यास हथकरघा प्रशिक्षण केन्द्र (स्वदेशी अहिंसक आजीविका)

आचार्यश्री विद्यासागरजी महाराज में अपने शिष्यों का संवर्धन करने का अभूतपूर्व सामर्थ्य है। उनका बाह्य व्यक्तित्व सरल, सहज और मनोरम है किंतु अंतरंग तपस्या में वे वज्र से कठोर साधक हैं। कन्नड़ भाषी होते हुए भी विद्यासागरजी ने हिन्दी, संस्कृत, कन्नड़, प्राकृत, बंगला और अँग्रेजी में लेखन किया है। उन्होंने 'निरंजन-शतकं', 'भावना-शतकं', 'परीषह-जय-शतकं', 'सुनीति-शतकं' व 'श्रमण-शतकं' नाम से पाँच शतकों की रचना संस्कृत में की है तथा स्वयं ही इनका पद्यानुवाद भी किया है। उनके द्वारा रचित संसार में सर्वाधिक चर्चित, काव्य प्रतिभा की चरम प्रस्तुति है- 'मूकमाटी' महाकाव्य। यह रूपक कथा काव्य, अध्यात्म, दर्शन व युग चेतना का संगम है। संस्कृति, जन और भूमि की महत्ता को स्थापित करते हुए आचार्यश्री ने इस महाकाव्य के माध्यम से राष्ट्रीय अस्मिता को पुनर्जीवित किया है। उनकी रचनाएँ मात्र कृतियाँ ही नहीं हैं, वे तो अकृत्रिम चैत्यालय हैं। उनके उपदेश, प्रवचन, प्रेरणा और आशीर्वाद से चैत्यालय, जिनालय, स्वाध्याय शाला, औषधालय, यात्री निवास, त्रिकाल चौबीसी आदि की स्थापना कई स्थानों पर हुई है और अनेक जगहों पर निर्माण जारी है। कितने ही विकलांग शिविरों में कृत्रिम अंग, श्रवण यंत्र, बैसाखियाँ, तीन पहिए की साइकलें वितरित की गई हैं। शिविरों के माध्यम से आँख के ऑपरेशन, दवाइयों, चश्मों का निःशुल्क वितरण हुआ है। 'सर्वोदय तीर्थ' अमरकंटक में विकलांग निःशुल्क सहायता केंद्र चल रहा है। जीव व पशु दया की भावना से देश के विभिन्न राज्यों में दयोदय गौशालाएँ स्थापित हुई हैं, जहाँ

कत्लखाने जा रहे हजारों पशुओं को लाकर संरक्षण दिया जा रहा है। आचार्यजी की भावना है कि पशु मांस निर्यात निरोध का जनजागरण अभियान किसी दल, मजहब या समाज तक सीमित न रहे अपितु इसमें सभी राजनीतिक दल, समाज, धर्माचार्य और व्यक्तियों की सामूहिक भागीदारी रहे।

आचार्यश्री विद्यासागरजी महाराज का जीवन अपने आप में शिक्षा-दर्शन है। इनके दार्शनिक व्यक्तित्व और शैक्षिक मापदण्डों-मानदण्डों की व्याख्या ने इनको राष्ट्र धरोहर के रूप में संस्थापित कर दिया है। ये वर्तमान की एक ऐसी जीवन्त दिव्यमूर्ति है, जिससे शासन भी समय-समय पर दिशा-निर्देशन प्राप्त करने के लिये लालायित रहता है। इनकी सबसे बड़ी विशेषता तो यही रही है कि इन्होंने व्यक्ति को नहीं व्यक्तित्व को तैयार किया है, उसी के विषय में चिंतन किया है। उनका कहना है – यह देश एक व्यक्ति नहीं है, यह एक व्यक्तित्व है; जिसमें भारत के अलावा अन्य देश अपने आचरण का प्रतिबिम्ब इस भारत रूपी दर्पण के व्यक्तित्व में देख सकते हैं।

आचार्यश्री विद्यासागरजी महाराज की रचनायें –

तालिका क्रमांक-01

संस्कृत रचनायें	हिंदी काव्य	स्तुति सरोज	ग्रन्थ प्रवचन
1-शारदा स्तुति	1-मूकमाटी	1-आचार्य शांतिसागर स्तुति	1- समयोपदेश भाग 1-2,
2-श्रमण शतकम	2-नर्मदा का नरम कंकर	2-आचार्य वीरसागर स्तुति	2- गुरुवयणं
3-निरंजन शतकम	3-डुबों मत लगाओ डुबकी	3-आचार्य शिवसागर स्तुति	3- दिव्योपदेश
4-भावना शतकम	4-तोता क्यों रोता	4-आचार्य ज्ञानसागर स्तुति	4- इष्टोपदेश
5-परीषहजय शतकम्	5-चेतना के गहराव में	5-अध्यात्म भक्तिगीत	5- पंचास्तिकायोपदेश
6-सुनीति शतकम	6-अनेक हाईको कवितायें (अप्रकाशित हैः	(कुल 07 भक्तिगीत)	6- श्रुताराधना भाग 1-2-3
7-चेतन चंद्रोदय			
8-धीवरोदय चंपू काव्य (अप्रकाशित)			

आचार्य श्री के हिंदी शतक, अनुवादित ग्रंथ और प्रवचन साहित्य

तालिका क्रमांक- 02

हिंदी शतक	अनुवादित ग्रंथ	प्रवचन साहित्य
1-निजानुभव शतक	1-कुन्दकुन्द का कुन्दन(समयसार)	·प्रवचन पर्व
2-मुक्तक शतक	2-निजामृतपान(समयसार कलश)	2- प्रवचन पीयूष
3-श्रमण शतक	3-अष्ट पाहुड़	3- प्रवचनामृत
4-निरंजन शतक	4-नियमसार	4- प्रवचन पारिजात
5-भावना शतक	5-बारस अणुवेक्खा	5- प्रवचन पंचामृत

6-परीषहजय शतक 7-सुनीति शतक 8-दोहादोहन शतक 9-सूर्योदय शतक 10-पूर्णादय शतक 11-सर्वोदय शतक 12-जिनस्तुति शतक	6-पंचास्तिकाय 7-इष्टोपदेश,बंसततिलका 8-प्रवचनसार 9-समाधिसुधा,समाधि शतक 10-नव भक्तियां,आचार्य पूज्यपाद कृत 11-समन्तभद्र की भद्रता (स्वंयभू स्त्रोत) 12-रयणमंजूषा(रत्नकरण्डकश्रावकाचार) 13-आप्तमीमांसा,देवागम स्त्रोत 14-द्रव्य संग्रह,बसंततिलका छंद 15-योगसार	6- प्रवचन प्रदीप 7- प्रवचनप्रमेय 8- प्रवचनिका 9- प्रवचन सुरभि 10- तेरह सौ एक 11- धीवर की धी 12- सर्वोदय सार 13- सीप के मोती 14- विद्या वाणी

शिक्षा का अर्थ – शिक्षा शब्द की व्युत्पत्ति है – शिक्ष् धातु से निष्पन्न होकर स्त्रीविवक्षा में टाप् प्रत्यय लगने पर शिक्षा शब्द बना है। इसका अर्थ है – शिक्ष् धातु का प्रयोग सीखने-सिखाने, कौशल का अध्ययन, ज्ञान, किसी कला में प्रशिक्षण, निर्देश, पाठ आदि है। शिक्षा शब्द के लिए अँग्रेजी में एजुकेशन शब्द का प्रयोग किया जाता है। एजुकेशन शब्द लैटिन भाषा के एजुकेटम शब्द से विकसित हुआ है जिसका अर्थ E तथा DUCO शब्दों से मिलकर बना है E का अर्थ है अंदर से जबकि DUCO का अर्थ आगे बढ़ाना। शिक्षा के सार्वभौमिक अर्थ को स्पष्ट करते हुए कहा गया है –

सा विद्या या विमुक्तये।

वही विद्या है जो मुक्ति के लिए हो।

शिक्षा जन्म से लेकर मृत्यु पर्यन्त तक चलने वाली एक प्रक्रिया है, जिसमें सतत् सीखने-सिखाने का उपक्रम जुड़ा हुआ है।

- **शिक्षा की परिभाषाएं –**
- **आचार्य श्री विद्यासागर जी महाराज के द्वारा प्रतिपादित शिक्षा की परिभाषाएँ-**
- **1."हित का सृजन व अहित का विसर्जन ही शिक्षा का सही लक्षण है।" (16 जनवरी, सागर) 2."शिक्षा अर्थकारी नहीं परमार्थकारी होनी चाहिए।" (16 जनवरी, सागर)**
- **3."शिक्षा जीवन का निर्वाह नहीं निर्माण करती है।" 13 जनवरी, 1986, जबलपुर**
- **शिक्षा का उद्देश्य – शिक्षा का उद्देश्य व्यक्ति के व्यक्तित्व का निर्माण, शारीरिक, मानसिक, आर्थिक, सामाजिक, चारित्रिक, आध्यात्मिक विकास के साथ आत्मिक आनंद की अनुभूति भी है। इन सब विषयों का तलस्पर्शी मनोभाव पूज्य आचार्यश्री अपने शिक्षा उद्देश्यों में प्रकट किया है, जो कि निम्न हैं –**

- "शिक्षा का वास्तविक अर्थ व्यक्तित्व का निर्माण, संस्कृति की रक्षा और समाज की उन्नति होता है। शिक्षा मानव जीवन का अनमोल उपहार है। यह हमारी संस्कृति का मूल आधार है।"
- "शिक्षा जीवन का पवित्र संस्कार है, जो हमें मानवतावादी सिद्धान्त पर चलना सिखाती है।" "जिसने भी जीवन धारण किया है उसे शिक्षा की बड़ी आवश्यकता है शिक्षा हमें सही मार्ग ही नहीं मंजिल भी दिखाती है।" शिक्षा साध्य नहीं साधन होती है।
- "शिक्षा जीवन का निर्वाह नहीं निर्माण करती है।"

(आचार्यश्री 1९86, तेरा सो एक, ज्ञानोदय प्रकाशन, जबलपुर)

- "जिसने भी जीवन धारण किया है उसे शिक्षा की बड़ी आवश्यकता है शिक्षा हमें सही मार्ग ही नहीं मंजिल भी दिखाती है।"
- "हित का सृजन व अहित का विसर्जन ही शिक्षा का सही लक्षण है।"
- अर्थ हमारा जीवन का लक्ष्य नहीं है value based education हो, जो हमें प्राप्त करना है।
- "शिक्षा अर्थकारी नहीं परमार्थ कारी होनी चाहिए।"

(आचार्य विद्यासागर शिक्षा का अर्थ ऑडियो दिनांक 16 जनवरी सागर)

- "अध्यापन और प्रयोग के द्वारा एक निश्चित आदर्श तक पहुँचना ही शिक्षा का उद्देश्य होना चाहिए।"

(रामटेक ज्ञान चर्चा, 14.3.14)

- सर्वप्रथम शारीरिक विकास को शिक्षा का महत्त्वपूर्ण उद्देश्य माना गया है। दूसरा मानसिक स्थिरता होनी चाहिए। तीसरा अंग स्वाश्रित होना है। शिक्षा का चौथा फल विद्यार्थी का नीति-न्याय में निपुण होना चाहिए। शिक्षा का अंतिम फल है अध्यात्म। (विद्या की परछाइयाँ) आज की शिक्षा व्यवस्था अस्वस्थ है, हमें तो स्वस्थ विद्या व्यवस्था बनानी है, क्योंकि शिक्षा तो जीवन को उन्नत बनाने की कला है। इसके लिए सात आधार स्तंभ के बल पर भी शिक्षा के उद्देश्य आचार्य श्री जी द्वारा बताये गये हैं।
- १. स्वस्थ तन
- २. स्वस्थ मन
- 3. स्वस्थ वचन
- ४. स्वस्थ धन
- ५. स्वस्थ वन
- ६. स्वस्थ वतन
- ७. स्वस्थ चेतन

- **शिक्षा का पाठ्यक्रम –** पाठ्यक्रम एक सुनियोजित प्रक्रिया एवं स्तर है। जिसमें विद्यालय, महाविद्यालय, विश्वविद्यालय या अन्य शैक्षिक प्रक्रियाओं में कौन-सी क्रियाविधियों एवं विषयों को सम्मिलित कर शिक्षा दी जानी है, इस प्रकार की रूपरेखा निर्मित कर सम्पूर्ण शिक्षा की प्रक्रिया सुनीति ढंग से सुनियोजित एवं व्यव िस्थत बनाता है। इसी आधार को बल देने का कार्य आचार्यश्री विद्यासागरजी महाराज के सूत्रों ने भी किया है, जिन्हें निम्न रूप से उद्घाटित कर रहे हैं –
- आचार्यश्री कहते हैं – पाठ्यक्रम की संरचना प्रत्यक्ष प्रणाली से हो, जिसमें कार्यान्वित किए जाने वाले समस्त साधनों को समाहित कर विद्यार्थी के सर्वांगीण उन्नति के लिए दृढ़ता के साथ क्रियान्वयन किया जा सके। आचार्यश्री के अनुसार निम्न क्रम में हम पाठ्यक्रम का निर्माण कर सकते हैं –
- जिसमें व्यक्तित्व के सभी पहलुओं को विकास का पूर्ण अवसर मिले।
- पाठ्यक्रम बोझ बढ़ाने वाला न होकर बोध कराने वाला होना चाहिए।
- पाठ्यक्रम चिंता का कारण न बने वरन् विद्यार्थी को चिंतन की धारा से जोड़े और उसे हल्का बनाकर उसके चित्त का चमत्कार करे।
- पाठ्यक्रम में प्रदर्शन नहीं आत्म दर्शन होना चाहिए। जो विद्यार्थियों को उनकी संस्कृति और सभ्यता का ज्ञान अवश्य कराये।
- पाठ्यक्रम के सभी विषय एक दूसरे से सम्बन्धित एवं यथार्थ जीवन से जुड़े होना चाहिए।
- विषय विशेष को एक दृष्टिकोण से नहीं देखना चाहिए, उसमें धर्म, दर्शन, आध्यात्मिक-संस्कृति, आदर्श-जीवन-मूल्य निहित होते हैं, अतः उन पर विचार करते हुए विद्यार्थी को विषय की गहराई तक ले जाना वाला पाठ्यक्रम निर्माण करना चाहिए।
- पाठ्यक्रम के द्वारा विद्यार्थियों को उनकी संस्कृति एवं सभ्यता का ज्ञान कराना चाहिए।
- सांस्कृतिक विकास के लिए भाषा, साहित्य, संगीत, कला तथा हमारी सांस्कृतिक धरोहर का ज्ञान विद्यार्थियों को दिया जाना चाहिए, जिससे विद्यार्थी भारत के स्वर्णिम अतीत को जान सके।

  (ऑडियो, जगदलपुर दिनांक 28 फरवरी 2012 आचार्य विद्यासागर जी की पाठ्यक्रम की संकल्पना)।
- "इतिहास हमें जीवन की सही दिशा का बोध कराता है क्योंकि इतिहास के यथार्थ को जानकर ही भविष्य का सही निर्धारण होता है। अतः इतिहास का पाठ्यक्रम अत्यंत सावधानी से तैयार किया जाना चाहिए।

  (भोपाल, 7 अक्टूबर, 2016)
- "विद्यार्थियों को सत्य और अहिंसा की शिक्षा प्रदान न की गई तो देश में आतंकवाद कभी समाप्त नहीं होगा। अतः प्रत्येक विषय के साथ सत्य और अहिंसा के सूत्रों को समाहित किया जाना चाहिए।

  (आचार्य विद्यासागर, 1996 समग्र प्रकाशन, सागर, पृष्ठ 321)

- पाठ्यक्रम में आदर्श-पुरुषों के चरित्र से सम्बंधित साहित्य होना चाहिए।
- पाठ्यक्रम की संरचना ऐसी हो जिसमें श्रम को अधिक महत्त्व दिया गया हो जो कि विद्यार्थियों को स्वाश्रित बनने की शिक्षा दे।
- पाठ्यक्रम के जीवनोपयोगी होने से न केवल व्यक्ति एवं समाज लाभान्वित होंगे, वरन् देश को भी समर्पित नागरिक प्राप्त होंगे।
- पाठ्यक्रम के माध्यम से वर्तमान के वातावरण का निर्माण करने वाले सुयोग्य, प्रतिभावान् व कर्तव्यनिष्ठ व्यक्तित्व का निर्माण होगा। अतः पाठ्यक्रम का निर्धारण करते समय उपयुक्त तथ्यों के साथ निम्न विषयों का भी समावेश होना चाहिए-

❖ **ज्ञानात्मक विषय-** भाषा, गणित, विज्ञान, सामाजिक अध्ययन, अर्थशास्त्र, वाणिज्य और अध्यात्म।

❖ **भावात्मक विषय-** साहित्य, दर्शन, नीति शास्त्र, धर्म शास्त्र, संगीत, ललित कला व संस्कृति।

❖ **क्रियात्मक विषय-** सहगामी क्रियाएँ, शिल्पकला, शारीरिक शिक्षा व चरित्र निर्माण।

- **शिक्षण विधियाँ –** शिक्षक के द्वारा विद्यार्थी को जो ज्ञान प्रदान किया जाता है, उस ज्ञान प्रदान करने के ढंगों, विधियों, तकनीकों एवं क्रियात्मक पहलुओं को शिक्षण विधि (teaching method) कहते हैं। 'शिक्षण विधि' पद का प्रयोग बड़े व्यापक अर्थ में होता है। एक ओर तो इसके अंतर्गत अनेक प्रणालियाँ एवं योजनाएँ सम्मिलित की जाती हैं, दूसरी ओर शिक्षण की बहुत-सी प्रक्रियाएँ भी सम्मिलित कर ली जाती हैं। यहाँ हम परम पूज्य संत शिरोमणि आचार्यश्री विद्यासागरजी महाराज की शिक्षण विधियों के विषय में उनके द्वारा निःसृत विधियों को स्पष्टतया लिख रहे हैं –
- श्रम विधि
- उदाहरण विधि
- सूत्र विधि
- कथा विधि
- प्रयोगात्मक विधि
- व्याख्या विधि
- प्रत्यक्ष विधि या करके सीखना
- स्वाध्याय विधि
- नय विधि
- शब्द विधि

- **चिंतन विधि**
- **शोध विधि**
- **शिक्षण कला – शिक्षण विधियाँ कितनी भी प्रभावी क्यों न हो ? यदि हमें शिक्षण कला नहीं आती है तो हम विद्यार्थियों को ज्ञान परोसने में अक्षम ही रहेंगे। इस संदर्भ में पूज्य आचार्यश्री कहते हैं – "आत्मीयता के साथ अपनी बात, पाठ्यवस्तु, बच्चों तक पहुँचाना ही शिक्षण कला है।"**

  (बहोरीबंद 27.4.2006)
- **चित्रकला – "भाषा समझ में नहीं आती तो चित्रों से पढ़ लिया जाता है यह भारतीय संस्कृति है।"**

  (भोपाल, 6 अक्टूबर, 2016)
- **"मात्र टीचिंग नहीं प्रेक्टिकल भी हो – पढ़ना-पढ़ाना मात्र ही नहीं, प्रयोग का महत्त्व है प्रयोग करने पर पूर्ण रूप से समझ में आ जाता है,विषय स्पष्ट हो जाता है। अंश-अंश को प्रयोगात्मक ढंग से समझाया जा सकता है, संकेत देना, प्रश्न पूछना, चित्र दिखाना, करके दिखाओ आदि के माध्यम से विद्यार्थी विषय के बड़े अंश को शीघ्र ही ग्रहण कर लेता है, यदि यह भी कहा जाए कि विद्यार्थी 90 प्रतिशत तक के विषय को ग्रहण कर लेता है तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी। प्रयोग जीवन में बहुत प्रेरणा देने वाला होता है। संकेत के बिना भी यदि प्रयोग करते जायें, कार्य करते जायें तो बहुत कुछ उपलब्धियाँ, अनुभव मिल जाते हैं।**

  (रामटेक, 22.02.2014)
- **"जो आप बताना चाह रहे हैं वह जीवन में उतर जाये, उसके पल्ले पड़ जायें, गले उतर जायें वही सही शिक्षा है।"**

  (रामटेक, 24.02.2014)
- **शिक्षक को अपने विषय की समझाने की कला में कुशल होना चाहिए। शिक्षण कला में समझाना होता है भाषण बाजी नहीं।"**
- **"शिक्षण से पहले पाठ्यवस्तु के उद्देश्य निश्चित करके, योजना बनाकर उसे अंशों में विभाजित कर विद्यार्थी के सम्मुख प्रस्तुत करना ।**
- **शिक्षक हमेशा पाठ्यवस्तु का उद्देश्य लेकर उसे अंशों में विभाजित करे फिर छात्रों के सम्मुख प्रस्तुत करें जिससे छात्रों को बोझ का अनुभव न हो और वे सरलता से विषय वस्तु समझ सकें।"**

  (रामटेक, 22.02.2014)
- **प्रयोग को चालू करें शिक्षा को आप जीवित जाने, जो सोया है उसे जगा देती है। यह शिक्षा...यह पक्का है कि शिक्षा जीवित वस्तु है। कोई भी कार्य करना है तो पद्धति बनाओ विज्ञापन नहीं। किसी को बताए नहीं, कार्य करते जायें, वह कार्य उसका स्वयं बता देगा कि कितनी सफलता की ओर है।**

(रामटेक, 24.02.2014)

- **शिक्षक** – सुप्रसिद्ध कवि व आलोचक **गोलेन्द्र पटेल** ने शिक्षक के संदर्भ में कहा है कि शिक्षक चेतना के चिराग हैं। सही मायने में शिष्य के मन में सीखने की इच्छा को जो जागृत कर पाते हैं वे ही **शिकृषक** कहलाते हैं। आचार्यश्री विद्यासागरजी महाराज ने शिक्षक के विषय में स्पष्टतया चार बातें शिक्षकों एवं संचालकों को ध्यान में रखने के लिए प्रेरित किया है –

1. **स्वाभिमानी बनना-बनाना**
2. **स्वाश्रित होना-करना**
3. **नीति न्याय बनाए रखना –रखवाना**
4. **दया-सेवा का भाव होना देना**

शिक्षा के उपर्युक्त चार दायित्वों को प्राथमिकता देते हुए शिक्षा स्व-परोपकारी बताया है और इसी से हम अपने प्राचीन स्वरूप में पहुँच सकते हैं, इसका स्पष्ट उल्लेख किया है।

(15.08.2016 सती कॉलेज, विदिशा म.प्र.)

- **आचार्यश्री शिक्षक-शिक्षिका वर्ग को संबोधित करते हुए कह रहे हैं कि "शिक्षक जितने उत्साह और ऊर्जा से भरकर विद्यार्थियों को अध्यापन कार्य करायेगा उतना ही उनमें आत्मविश्वास बढ़ेगा और उसका प्रभाव परिवार, समाज व देश- विदेश पर पड़ेगा।"**

(06.02.14 रामटेक पृ. 148)

- **"पुरुषार्थ करो आगे बढ़ो, उद्देश्य के प्रति कभी आलस्य नहीं होना चाहिए। उद्देश्य पूर्ण कार्य हो। "दूर दृष्टि रखो, दूर दृष्टि रखने से अपने भविष्य के बारे में और अतीत के बारे में ज्ञान प्राप्त होता है।**

(19.2.14 रामटेक)

- **शिक्षकों को उत्साहवर्धक, सहयोगी और मानवीय होना चाहिए जिससे विद्यार्थी अपनी संभावनाओं का पूर्ण विकास कर जिम्मेदार नागरिक के रूप में अपनी भूमिका निभा सके। इस प्रकार की उपयुक्त क्षमताओं का विकास वह कर सके जिससे वास्तविक स्थितियों में उसकी न केवल उपरोक्त समझ हो, बल्कि वह उनकी रचना भी कर सके।**
- **भाषा की गहरी समझ और दक्षता हासिल करें।**
- **कला शिक्षा के माध्यम से विद्यार्थियों में कला और सौंदर्यबोध समझ का विकास कर सकें।**
- **वंचित बच्चों और विभिन्न असमर्थताओं वाले बच्चों की आवश्यकताओं सहित सभी बच्चों की सीखने की आवश्यकताओं को समझ सके।**
- **दृष्टिकोण में बदलाव के संदर्भ में यह आवश्यक है कि शिक्षकों में व्यवसायिकता के विकास के लिए शिक्षण-प्रशिक्षण के एक अंतर्भूत मॉडल के विकास को बढ़ावा दिया जाये।**

- **सीखना किस प्रकार होता है? इसकी समझ उसमें हो और वह उसके अनुकूल माहौल बनाये। ज्ञान को व्यक्तिगत अनुभव के रूप में समझे, जो सीखने-सिखाने के साझे अनुभव के रूप में प्राप्त किया जाता है, न कि पाठ्यपुस्तकों के बाह्य यथार्थ के रूप में।**

(NCF-2005)

- **"पढने का नाम शिक्षक-शिक्षिका नहीं, पढ़ाने का नाम शिक्षक-शिक्षिका है। सामने वाला व्यक्ति कहाँ अटक सकता है? कहाँ पर मोड़ आ सकता है? दिमाग कहाँ पर काम नहीं करेगा यह सब हम पढ़कर अनुभव करके आये हैं मुझे भी ऐसे ही पढ़ाया गया वैसे ही सामने वाले को भी समझ में आ जाये इसको बताते हैं।**
- **संयम, रूचि, उनकी जिज्ञासायें बार-बार उभारते रहना यह गूढ़ तत्त्व उसके दिमाग में भी आ जाये, जिससे वह भी भीतर चला जाये वह उसकी रुचि पर आधारित है लेकिन फिर भी अपने भीतर यह करुणा, विवेक जागृत होना चाहिए कि किस प्रकार सब का कल्याण किया जा सकता है?**
- **बड़ा अद्भुत है यह निमित्त-नैमित्तिक सम्बन्ध, शिक्षक सिर्फ शिक्षा ही नहीं देता बल्कि देश के भविष्य के दायित्व का निर्माण उसके कंधों पर रखता है अतः आवश्यक है कि शिक्षकों को इस पद को गौरवपूर्ण मानकर विद्यार्थियों की रुचि, उनके अंदर का उत्साह को बनाए रखने के लिए कुछ परिस्थितियों या समस्या को रखना चाहिए जिससे उनके अंदर के भावों को अभिव्यक्त करने व कार्यों को करने में प्रेरणा मिल सके एवं नैतिक व सामाजिक विकास कार्यों के प्रति रुचि जागृत करें।"**
- **"यह संस्कार का कार्य प्रारम्भ दशा में बीज रूप होता है फिर फलता-फूलता बढ़ता है सब को छाया देता है। ऐसे ही संस्कार के बीज फेंकते जाओ सहस्त्र गुणा फलित होता है।" (28 जनवरी, 2014)**
- **आज की पीढ़ी को विषयों से विरक्ति हो इस प्रकार का शिक्षण देना चाहिए यह मुख्य है फिर तो विद्यार्थी आगे उन्नति की ओर बढ़ता जायेगा। 24 घंटे चारों तरफ पंचेन्द्रिय के विषय कषाय बिखरे हुए रहते हैं इसमें आपको अपना पुरुषार्थ करना है और पेपर हल करना है स्वयं बचो यदि बचा सको तो बचाओ स्वयं को तो पहले बचाना ही चाहिए।" (13 फरवरी, 2014)**
- **आचार्यश्रीजी के अनुसार यदि एक वकील गलती करता है तो फाइल के नीचे दब जाती है, एक डॉक्टर गलती करता है तो कब्र के नीचे दब जाती है लेकिन एक शिक्षक गलती करता है तो राष्ट्र का भाग्य बिगड़ जाता है।**
- **शिक्षक व्यक्तित्व निर्माण का एक साँचा होता है, जो जैसा आकार देता है वह वैसा प्रतिरूप बनता है। इसलिए शिक्षक को हमेशा अपने विषय में दक्ष, तत्त्व चिंतक होना चाहिए और अवकाश के समय में अपने विषय में विचार करना चाहिए क्योंकि शिक्षक का कभी अवकाश नहीं होता है।**

आचार्यश्री अच्छे शिक्षक की विशेषताओं के विषय में कहते हैं -

1- जिसकी छात्रो एवं शिक्षण मे रुचि हो

2- छात्रों में न्याय-नीति-अनुशासन के सूत्रों का संचार करने वाला हो
3- निष्पक्षता एवं स्वस्थ मनोवृत्ति वाला हो
4- विनोद का भाव से पठन-पाठन कराने वाला हो
5- शिष्टाचार का अद्वितीय उदाहरण हो
6- आत्म मूल्यांकन करने वाला हो
7- विषयवस्तु की प्रवीणता हो
8- अध्यापन विधि का कौशल हो
9- प्रभावशाली संचार हो
10- धैर्यवान एवं सहनशीलता हो।

- **कुशल शिक्षक के गुण -**
- **शिक्षक एक दर्पण के समान है, जो पक्षपात से रहित विद्यार्थी के दोष दूर करता है।**
- **शिक्षक नींव के पत्थर की तरह है, जिसके आधार पर महल खड़ा होता है।**
- **शिक्षक गंभीर, स्वस्थ, व्यसनमुक्त, निःस्वार्थभाव युक्त, सकारात्मक, करुणामयी, वात्सल्यमयी, प्रतिफल की इच्छा से रहित तथा आत्म संतुष्ट होना चाहिए।**
- **शिक्षक का कार्य शिक्षण देना है न कि निर्देशन देना।**
- **शिक्षक को विद्यार्थी की ज्ञान की भूख को हमेशा बनाये रखना चाहिए।**
- **शिक्षक को किसी भी विषय में जल्दबाजी व उद्वेग में नहीं आना चाहिए, उसमें सुनने की क्षमता होना चाहिए।**
- **शिक्षक का कार्य बच्चों को समझाने का नहीं उन्हें समझने का है, हमें उन जैसा बनना होता है तब हम उन्हें समझ सकते हैं।**
- **शिक्षक को विद्यार्थी के अनुपात से ज्ञान देना चाहिए।**
- **शिक्षक की बहुआयामी विशेषताएँ -**
- **1 पूत पवित्र**
- **2 पीयूष पायी हंस-परमहंस**
- **3 अपने प्रति वज्र-सम कठोर**
- **4 पर के प्रति नवनीत... मृदु**
- **5 पाप-प्रपंच से मुक्त**
- **6 पवन सम निःसंग**
- **7 परतंत्र, भीरु**

- 8 दर्पण सम दर्प से परीत
- 9 हरा-भरा फूला-फला, पादप-सम विनीत
- 10 नदी प्रवाह सम लक्ष्य की ओर अरुक, अथक...गतिमान
- 11 मानापमान समान जिन्हें, योग में निश्चल मेरु-सम, उपयोग में निश्चल धेनु-सम
- 12 छिद्रान्वेषी नहीं गुणग्राही हो
- 13 प्रतिकूल शत्रुओं पर कभी बरसते नहीं, अनुकूल मित्रों पर कभी हरसते नहीं
- 14 ख्याति-कीर्ति-लाभ पर कभी तरसते नहीं!
- 15 निद्राजयी, इंद्रिय-विजय, जलाशय-सम सदाशयी, मिताहारी, हित-मित-भाषी
- 16 योग्यता
- 17 निज दोषों के प्रक्षालन हेतु, आत्मनिंदक हो
- 18 आचरण
- 19 प्राज्ञ
- 20 यशस्वी
- 21. विद्यार्थी रूपी कुंभ को सुंदर रूप देने वाला।
- एक कुशल शिक्षक का प्रमुख कत्र्तव्य है कि छात्र को दंडित करे तो वह विवेक के साथ दंडित करे जिससे छात्र अपनी गलती सुधार सके । आचार्यश्रीजी डाँट के समर्थक रहे और उन्होंने कहा भी है "शिष्य और शीशी दोनों में डाँट आवश्यक है।"
- **शिक्षार्थी** – शिक्षा को चाहने वाला अर्थात् जिसमें शिक्षा के प्रति लगन लगी हो वह शिक्षार्थी है। विद्यार्थी, छात्र, शिष्य आदि अनेक नामों से अभिहित है। शिक्षार्थी किसी भी आयु का हो, बस उसमें सीखने की जिजीविषा हो। आचार्यश्री विद्यासागरजी महाराज कहते हैं –
- "योग्यता को प्राप्त करना गुणों पर आधारित है लेकिन योग्यता का उपयोग करना पुरुषार्थ पर आधारित है।"
  (22 अगस्त, 2016, भोपाल)
- "जो विद्यार्थी झुकने की कला सीख लेते हैं उन्हें फिर जीवन में किसी के सामने झुकने की जरूरत नहीं पड़ती।" (1 नवंबर, 2016, मंगलवार, भोपाल)
- "सुनो तो सही, पहले सोचो नहीं, पछताओगे।"
- "पुरुषार्थ करो, आगे बढ़ो, उद्देश्य के प्रति कभी आलस्य नहीं होना चाहिए। उद्देश्य पूर्ण कार्य हो।"
  (आचार्य श्री विद्यासागर महाराज, रामटेक, 1 फरवरी, 2014)

- "कामना से रहित अपना कर्तव्य करते जाओ यही करने योग्य है।" (11/2/14 रामटेक)
- "चिंता ना करो , सफलता मिलती, चिंतन से ही।"
- "स्थिर मन हो, महामंत्र सुख का, सोपान होता।"
- "अस्थिर मन, पाप दुख का, सोपान होता है।"(मूकमाटी पृ. 109)
- "पेपर देते समय जल्दी नहीं करो क्योंकि जल्दी में हम भूल जाते हैं थोड़ा-सा सोच-विचार कर हल करने पर पूरे-पूरे नंबर मिलते हैं, पेपर जल्दी करो कोई बात नहीं लेकिन जल्दबाजी नहीं करो।"

(रामटेक, 22/2/14)

- "अनपढ़ व्यक्ति प्रयोग करके बहुत कुछ सीख जाता है। असलियत तो यह है कि प्रयोग के अभाव में पिछड़ते जा रहे हैं।"
- अध्यापकों की आज्ञा का पालन, नैतिक चरित्र और अध्यापक के शब्दों को अधिकारिक ज्ञान की तरह स्वीकारना शामिल है। (NCF-2005)
- विद्यार्जन के लिए जब विद्यार्थी विद्यालय में प्रवेश करता है। उसमें कुछ मुख्य गुणों का समावेश होना चाहिए। आदर्श विद्यार्थी के गुण -
- विद्यार्थी को आज्ञाप्रधानी होना चाहिए।
- अपने लक्ष्य या उद्देश्य के प्रति सजग होना चाहिए।
- प्रमाद से रहित व ब्रह्मचर्य के साथ विद्या ग्रहण करना चाहिए।
- विद्यार्थी की वाणी हित,मित,प्रिय होना चाहिए अर्थात् वाणी संयम से युक्त होना चाहिए।
- विद्यार्थी को कर्तव्यनिष्ठ, सजग व सृजनात्मक होना चाहिए।
- विद्यार्थी का खान-पान सात्विक व मर्यादा पूर्ण होना चाहिए।
- विद्यार्थी को नीति न्याय में निपुण होना चाहिए।
- विद्यार्थी का सबसे महत्त्वपूर्ण गुण है वह परिश्रमी हो।
- विद्यार्थी को सकारात्मक होना चाहिए।
- विद्यार्थी को मितव्ययी होना चाहिए।
- सही विद्यार्थी वह है जो समय का सदुपयोग करने वाला हो अर्थात् अपने हर कार्य को यथोचित समय से पूर्ण करे व शेष बचे हुए समय का अन्य ज्ञानार्जन में प्रयोग करे।
- **शिक्षा का माध्यम -** शिक्षण के लिए प्रयोग की जा रही भाषा को शिक्षा का माध्यम कहते हैं। अनेकानेक देशों में उनकी मातृभाषा ही प्राथमिक विद्यालयों में शिक्षा का माध्यम होती है। भारत देश के राज्यस्तरीय

शासकीय विद्यालय तो मातृभाषाओं में संचालित हैं परंतु निजी विद्यालय एवं उच्च शिक्षण संस्थान मातृभाषा के कौशल से अछूते हैं। आचार्यश्री विद्यासागरजी महाराज ने शिक्षा के माध्यम के लिए मातृभाषा पर जोर दिया है। जिसके सन्दर्भ में अध्ययन निम्न हैं -

- "भाषा व साहित्य के आधार पर ही आचरण सुरक्षित रह सकता है।" (रामटेक)
- "भाषा तो नदी का प्रभाव है। भले घाट तो तुम अपने-अपने बना लो लेकिन मातृभाषा तो नदी का प्रभाव रूप है।" "आज यदि भारत यह विचार कर ले कि विदेशी भाषा की अपेक्षा भारतीय भाषा में बच्चों का पठन-पाठन होगा तो भारतीय प्राचीन विद्या के माध्यम से हम विद्या-निष्ठ बनकर पूर्ण रूप से विकसित हो जायेंगे।" (विधानसभा भोपाल, 28/7/2016)
- "शिक्षा का माध्यम एक वस्तु है और अन्य भाषा का ज्ञान अलग वस्तु है। अपने भावों का माध्यम वही होना चाहिए जो मातृभाषा है।"
- "अन्य भाषा का विरोध नहीं है उसे एक भाषा के रूप में पढ़िए किन्तु माध्यम के रूप में अन्य भाषा को नहीं सीख सकते हैं क्योंकि उससे अपने भावों को अच्छे से पूर्णरूप से प्रस्तुत नहीं कर सकते, अतः मातृभाषा में पढ़ने-लिखने की स्वतंत्रता मिलनी चाहिए।
- शिक्षा की मजबूरी के रूप में अलग भाषा की स्वतंत्रता लादना ठीक नहीं, जो भाषा थोपी गई है उसके बारे में पुनः सोचना होगा, क्योंकि थोपी जाने वाली भाषा से पढ़ने-लिखने वाले अपने स्वाभिमान से च्युत हो गए हैं क्योंकि उन्हें इतिहास का ज्ञान न होने के कारण भारतीय प्राचीन भाषा की सम्पन्नता विस्मित हो गई है।"

(सर्वोदयी संत की... 107)

- "भाषा को भुलाकर कभी भी उन्नति हो नहीं सकती। अपना भी एक इतिहास है। विश्व में भारत एक ऐसा देश है, जहाँ अनेक भाषाएँ बोली जाती हैं उनको समाप्त करके एक विदेशी भाषा को ग्रहण करना उसमें शिक्षा देना, संस्कार देना, जीवन बनाना संभव ही नहीं है।"

(पत्रकार वार्ता जून 2017, चंद्रगिरी तीर्थ क्षेत्र, डोंगरगढ़, छत्तीसगढ़)

- "भाषा वही महत्त्वपूर्ण मानी जाती है जिस भाषा में विशेष रूप से साहित्य का सृजन हो। अतुल विज्ञान, शिक्षा पद्धति, समृद्ध देश की उन्नति, मानव समाज के विषय में विशेष आदर्श प्रस्तुत किए हो भाषा अपने आप में महत्त्वपूर्ण मानी जाती है।" (रामटेक, 7.2.2014)
- "विदेशी भाषा में आपका चिंतन नहीं चल सकता। आप अनुवाद करके काम चला रहे हैं जिसमें मौलिकता नहीं है, अपनी भाषा पर स्वाभिमान तो रखना ही चाहिए।"
- "आज यदि भारत यह विचार कर ले कि विदेशी भाषा की अपेक्षा भारतीय भाषा में बच्चों का पठन-पाठन होगा, तो भारतीय प्राचीन विद्या के माध्यम से हम विद्यानिष्ठ बनकर पूर्णतः विकसित हो जायेंगे।"

(28 जुलाई, 2016) विधानसभा (भोपाल)

- आचार्यश्रीजी ने चिंतन के मौलिक स्वरूप की प्राप्ति के लिए मातृभाषा को सर्वोत्तम, सर्वश्रेष्ठ व सर्व विद्वानों से सर्वमान्य माना है जो उचित है। (रामटेक, 9.2.14)
- आचार्यश्रीजी के अनुसार शिक्षा का माध्यम मातृभाषा होना अनिवार्य है, किसी भी देश की आधारशिला उस राष्ट्र की शिक्षा होती है और शिक्षा अगर मातृभाषा में दी जाये। तभी राष्ट् अपने उन्नति के शिखर पायदान को छू सकता है। कोई भी बालक चाहे कितना भी दूसरी भाषा में बोलना, पढ़ना-लिखना सीख ले, परन्तु उसके विचार उसके भाव व स्वप्न उसकी अपनी मातृभाषा में ही आते हैं। वह उसके विचारों को स्थायित्व प्रदान करती है।
- शिक्षा का अर्थ संकेत होता है, संकेतों के माध्यम से ही सार ग्रहण किया जाता है, इसके लिए भाषा को उपकरण बनाया जाता है। अतः हिन्दी हो या अँग्रेजी जिस-जिस भाषा में विद्यार्थी अधिगम कर सके, जो कि अधिक मार्मिक एवं तलस्पर्शी हो, उसे ही शिक्षा का माध्यम बनाना चाहिए।
- द्रव्य, क्षेत्र, काल एवं भाव के अनुसार मातृभाषा में शिक्षा प्रदान करना चाहिए। मुख्यतः भाव जो हैं वह पहले आते हैं, भाषा बाद में। जो भाव जिस प्रकार से समझ सकते हैं, उसी अनुसार प्रयास करना चाहिए। ताकि वह जीवन पर्यंत अनुभूति में रहे। उदाहरण के लिए कंप्यूटर की भाषा बायनरी है। हम किसी भी भाषा में कंप्यूटर को समझाएँ वह पहले उसे अपनी भाषा अर्थात् बायनरी लैंग्वेज में परिवर्तित करता है, उसके बाद प्रक्रिया शुरू होती है, इसी प्रकार से विद्यार्थियों का अध्ययन भी स्वभाषा में होना चाहिए।
- वर्तमान में पाश्चात्य-सभ्यता के चलते भारत राष्ट्र में शिक्षा के क्षेत्र में अँग्रेजी भाषा अपना वर्चस्व बनाए रखे हुए है। मातृभाषा ये शब्द स्वयं मात्रा शब्द को लेकर बना है, जिसका अर्थ है अनुपात।
- भारत की शिक्षा की अधोमुखी होती चेतना का मुख्य कारण मातृभाषा में शिक्षण का अभाव है, जिसके चलते भारत राष्ट्र का विकास हर क्षेत्र में कुंठित हो गया है। समाज की मानसिकता में जिसे अँग्रेजी आती वही विकास का पात्र है और वही पढ़ा लिखा माना जाता है। आज अँग्रेजी के अभाव में छात्र अपने आप को पिछड़ा हुआ महसूस करता है। आज अभिभावक भी बच्चों को अँग्रेजी भाषा में शिक्षण देने के लिए लालायित रहते हैं।
- प्राचीन भारतीय इतिहास के परिप्रेक्ष्य में भारत को विविध भाषाओं की जननी माना जाता है। संगणक के क्षेत्र में भी मुख्य भाषा के रूप में संस्कृत को ही रखा गया है, परन्तु इतिहास के अभाव में आज का युवा अँग्रेजी के पीछे दिग्भ्रमित हो रहा है।
- गाँधी जी ने भी कहा - That nation is dumb with0ut nati0nnal language, वह राष्ट्र गूँगा माना जायेगा, जिसके पास अपनी स्वयं की भाषा नहीं होगी। इसलिए विश्व के जितने भी प्रगतिवादी राष्ट्र हैं, उनके देश में उनकी स्वयं की भाषा का चलन है।

- आचार्यश्रीजी का भी कहना है कि जिस देश की जो भाषा रहती है, उसमें यदि शिक्षा देना प्रारंभ कर दोगे तो उसके सारे युगीन व प्राचीन काल के संस्कार यहाँ पर भी आ जायेंगे।
- आचार्यश्रीजी कह रहे हैं कि आधुनिक शिक्षा में विदेशी भाषा पुष्ट होने से अपनी भाषा व संस्कृति पर कभी स्वाभिमान नहीं रख पाता है तथा चिंतन, मनन आदि भी मौलिक रूप से नहीं कर पाता है। इस बात को वैज्ञानिक भी स्वीकारते हैं। विज्ञान पत्रिका 'करंट साइंस' में राष्ट्रीय मस्तिष्क अनुसंधान केन्द्र के डॉक्टरों द्वारा कराए गए एम. आर. आई. परीक्षण की रिपोर्ट के अनुसार अँग्रेजी बोलते समय दिमाग का सिर्फ बायाँ हिस्सा सक्रिय रहता है और जब स्वदेशी भाषा बोलते हैं, तब दिमाग का दायाँ और बायाँ दोनों ही हिस्से सक्रिय हो जाते हैं जिससे दिमाग स्वस्थ व तरोताजा रहता है।"
- "भाषा व साहित्य के आधार पर ही आचरण पर सुरक्षित रह सकता है।" **(4 फरवरी, 2014, रामटेक)**
- "भाषा वही महत्त्वपूर्ण मानी जाती है, जिस भाषा में विशेष रूप से साहित्य का सृजन हो अतुल विज्ञान, शिक्षा पद्धति, समृद्ध देश की उन्नति, मानव समाज के विषय में विशेष आदर्श प्रस्तुत किए हो।"

  (7 फरवरी, 2014, रामटेक)
- जिस भाषा में साहित्य लिखा गया है, उस भाषा में ही उसको पढ़ेंगे नहीं, लिखेंगे नहीं, सोचेंगे नहीं व बोलेंगे नहीं तो वह रद्दी के बराबर हो जायेगी। ज्ञान का प्रभाव तभी तक रह सकता है, जब तक उसका अध्ययन-अध्यापन, प्रयोग होता है। यदि यह नहीं है तो भविष्य अंधकारमय होने वाला है। भाषा एवं साहित्य एक दूसरे के पूरक हैं।
- एक विद्यार्थी जिस देश में रहता है जिस समाज में रहता है, उसी समाज के अनुसार अपनी संस्कृति का निर्माण करता है। व्यावहारिक रूप में वह उस संस्कृति से परिचित होता है, ऐसे में यदि उसका अध्ययन अन्य भाषा को प्राथमिकता देकर कराया जाये तो वह अपनी संस्कृति एवं साहित्य से वंचित रह जायेगा। वह उसी भाषा में साहित्य को देखना चाहेगा, जिसमें उसने अध्ययन प्राप्त किया है। अध्ययन के पश्चात् वह बहुत सारी जानकारी एकत्रित कर सकता है। हेय-उपादेय को जान सकता है, जिस साहित्य का वह अध्ययन करेगा। उस साहित्य के अनुसार अपने आप को परिवर्तित करने का प्रयास करेगा, ऐसे में संस्कृति का ह्रास एवं साहित्य का अनुप्रयोग कम होता जायेगा एवं अन्य साहित्य को अपनाता चला जायेगा। वस्तुतः आचरण में परिवर्तन स्वाभाविक है एवं पाश्चात्यीकरण का प्रभाव निश्चित है।
- "भाषा को भुलाने में कभी भी उन्नति हो नहीं सकती। अपना भी एक इतिहास है, ऐतिहासिक विश्व में भारत एक ऐसा देश है जहाँ अनेक भाषाएँ बोली जाती हैं, उनको समाप्त करके एक विदेशी भाषा को ग्रहण करना, उसमें शिक्षा देना, संस्कार देना तथा जीवन बनाना संभव ही नहीं है।

  (जून, 2017 चन्द्रगिरी तीर्थ क्षेत्र डोंगरगढ़, छत्तीसगढ़)

- आचार्यश्रीजी कहते हैं - शिक्षा अथवा ज्ञान अपने आप में भाषा नहीं है किन्तु भाषा अपने आप में ज्ञान है, इसका अर्थ हुआ यदि हमें अपनी मातृभाषा का ज्ञान है तो हम बिना किसी बाधा के अनौपचारिक रूप से भी ज्ञान संग्रहित कर सकते हैं। भाष्य जिस भाषा को बोलते हैं, उसी भाषा में शब्दों का अर्थ स्पष्टीकरण करने से, उदाहरण आदि देने से, गुण-अर्थों को सरल माध्यम से समझा जा सकता है।
- "अपनी भाषा के अभाव में राष्ट्र की उन्नति नहीं" शिक्षा तो वही है, जो स्वाभिमान से जीने की कला सिखाए। नौकरी में सम्मान कहाँ रहता है ? सम्यक् शिक्षा वही है, जो स्वावलंबी बनाए, स्वावलंबी के लिए व्यवसाय जरूरी है।" (3 नवंबर, 2016, भोपाल)
- आज शिक्षा के क्षेत्र में भारत ने प्रगति की है। अंधाधुंध विद्यालयों, महाविद्यालयों एवं विश्वविद्यालयों की स्थापना हुई है। शिक्षा संस्थाओं में संख्यात्मक रूप से प्रगति हो गई, परन्तु गुणवत्ता का क्या ? आचार्यश्रीजी का कहना है शिक्षा ऐसी हो जो व्यक्ति को स्वाभिमान से जीना सिखाए। महात्मा गाँधी का भी ऐसा मानना है। अतः उन्होंने भी व्यवसाय एवं हस्तशिल्प आधारित शिक्षा को प्रोत्साहन दिया है परन्तु आज की शिक्षा प्रतिभा पलायन को बढ़ा रही है। हर युवा नौकरी करना चाहता है, स्वतंत्र होना चाहता है वास्तव में चंद स्वतंत्रता के लिए बॉस के आगे-पीछे घूमता-फिरता है एवं मशीनवत् कार्य करता है।
- शिक्षा का प्रभाव उत्तर प्रदेश में बैंक (पीओ) अर्थात् चपरासी की नौकरी के लिए बड़े-बड़े इंजीनियर, सी. ए. एवं एम. बी. ए. छात्रों ने फॉर्म भरे। ऐसे में गुणवत्ता का क्या ? इंजीनियरिंग की शिक्षा एवं एम.बी.ए. की शिक्षा ग्रहण करने का क्या तात्पर्य है ? कहीं न कहीं शिक्षा की गुणवत्ता में कमी है। तभी बेरोजगारी इतनी बढ़ गई है कि बालक कोई भी छोटे से छोटा काम करने तैयार है। नौकरी करना उनके स्टेट्स का सवाल है। ऐसे में व्यवसाय करने के लिए वे हतोत्साहित हो जाते हैं एवं उनका स्वाभिमान नौकरी की भेंट चढ़ जाता है। ऐसे में आचार्यश्रीजी ने स्वाभिमान पूर्ण स्वावलंबन हेतु शिक्षा को प्रेरित करते हैं और इसके लिए उन्होंने हथकरघा को प्रोत्साहित किया है। "योग्यता को प्राप्त करना गुणों पर आधारित है लेकिन योग्यता का उपयोग करना पुरुषार्थ पर आधारित है।"

(22 अगस्त, 2016, भोपाल)

- आचार्यश्रीजी कहते हैं - आज ज्ञान प्राप्ति के इतने साधन उपलब्ध हैं कि सूचनाओं को संग्रहित करके किसी भी कार्य करने की शैक्षिक योग्यता का प्राप्त होना सामान्य-सी बात है। यदि अभिरुचि, अभिव्यक्ति जिस ओर है, उससे सम्बन्धित गुण उपलब्ध हैं तो योग्यता प्राप्त की जा सकती है, लेकिन योग्यता प्राप्त करने के पश्चात् क्या ? उसका उपयोग करना आवश्यक है और यह उपयोग बिना पुरुषार्थ के असंभव है। श्रम का महत्त्व यहाँ स्पष्ट होता है, अधिगम प्राप्त करने के बाद, प्राप्त अधिगम का व्यवहारिक रूप में प्रयोग नहीं कर सकते, तो वह किसी कार्य का नहीं। वह मात्र अचेतन मस्तिष्क में सूचनाओं का संग्रह है। अतः पुरुषार्थ करना आवश्यक है।

- **मूल्यांकन –** मूल्यांकन का शाब्दिक अर्थ मूल्य का अंकन करना है। दूसरे शब्दों में मूल्यांकन मूल्य निर्धारण की प्रक्रिया है। मूल्यांकन शिक्षण प्रक्रिया का एक अविच्छिन्न अंग है। यह प्रक्रिया निरन्तर चलती रहती है। मूल्यांकन के अन्तर्गत उस व्यक्ति अथवा वस्तु की विशेषताओं की वांछनीयता पर दृष्टिपात किया जाता है। आचार्यश्रीजी द्वारा मूल्यांकन हेतु निम्न बिंदु प्रस्तुत किये गये हैं -
- "शिक्षा और परीक्षा दोनों महत्त्वपूर्ण हैं। शिक्षा के साथ परीक्षा भी अनिवार्य है। लेकिन शिक्षा का उद्देश्य मात्र परीक्षा नहीं हो सकता। किसी छात्र ने कितना ज्ञान प्राप्त किया है ? यह हम परीक्षा के माध्यम से मूल्यांकन नहीं कर सकते।
- पढने से ही शिक्षा आती है। यह भूल है। लिखने से ही स्मरण शक्ति बढ़ जाती है, यह और भी बड़ी भूल है। संकेत मात्र से भी बात समझ में आती है। काला अक्षर भैंस बराबर इसका मतलब है अक्षरों में ज्ञान नहीं है, जब वह बुद्धि का विषय बनता है तो संकेत की ओर दृष्टि चली जाती है। संकेत को समझने के लिए केवल आँख, कान काम नहीं करते चिंतन भी जरूरी है। चिंतन के लिए समय नहीं है तो सब बेकार है, वह कहें हमें इशारा भी चाहिए, सहारा भी चाहिए पर संकेत समझ में ना आये तो कुछ काम का नहीं, हिन्दी में जो बच्चों का मूल्यांकन किया जाता है। यह पद्धति यहाँ की नहीं विदेश की है। पहले के लोग कैसे परीक्षा लेते थे उसे भी देखिए" –
- पाठ्यक्रम की पुस्तिका से किसी भी एक प्रश्न को खोल लो और विद्यार्थियों से कहा जाये कि उसे व्याख्यायित करिए इस प्रकार दो-तीन बार कर लिया, यह बहुत अच्छी पद्धति है जैसे कि बोरी में परखी को घुसाया पुनः आजू-बाजू ऊपर अनाज की गुणवत्ता का परीक्षण कर लिया एक समान कहीं से भी परीक्षा कर लो। पूरे अनाज की गुणवत्ता एक-सी ही होगी।
- "आज तो प्रत्येक व्यक्ति शिक्षा का अर्थ परीक्षा में अच्छे नंबर लाना ही समझता है। शिक्षक और अभिभावक की दृष्टि 99.99 पर आकर टिकी रहती है, लेकिन परीक्षा व्यवस्था का नतीजा शिक्षा का मूल्यांकन नहीं है। जैसे हाथ से समुद्र की गहराई को मापा नहीं जा सकता, पानी में चाँदी के सिक्के को हाथ से निकाला नहीं जा सकता उसके लिए धैर्य व गंभीरता चाहिए वैसे ही विद्यार्थी की क्षमता के नियंत्रण के लिए धैर्य की आवश्यकता होती है" **(विद्या की परछाइयाँ, पृ. 20)**
- "पहले परीक्षा नहीं प्रयोग होता था, अध्यापन और प्रयोग के द्वारा निश्चित आदर्श तक पहुँचना ही शिक्षा है।" **(रामटेक, 12/2/14)**
- "किसी भी वस्तु का मूल्यांकन करते समय इतिहास को गौण नहीं करना चाहिए। इसका अतीत क्या था ? भविष्य क्या बन सकता है ? वर्तमान में इसका प्रभाव कहाँ तक है ? यह सब देखना चाहिए।" "परख रहे पर को, अपने को परखो जरा।" **(मूकमाटी पृ. 303)**

- "परीक्षा के द्वारा ही मूल्यांकन नहीं होता, बल्कि गुणवत्ता के आधार पर भी मूल्यांकन होता है। आँखों से हर कार्य पूर्ण नहीं होता बल्कि ज्ञान चक्षु भी जरूरी है।" (2 अक्टूबर 2016 भोपाल)
- **विद्यालय –** विद्यालय वह स्थान है, जहाँ शिक्षा ग्रहण की जाती है। विद्यालय एक ऐसी संस्था है, जहाँ बच्चों के शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक एवं नैतिक गुणों का विकास होता है। ' विद्यालय' शब्द के लिए आंग्ल भाषा में 'स्कूल' शब्द का प्रयोग होता है, जिसकी उत्पत्ति ग्रीक शब्द 'Skohla' या 'Skhole' से हुई है, जिससे तात्पर्य है– 'अवकाश'। यह अर्थ कुछ विचित्र – सा लगता है परंतु वास्तविकता यह है कि प्राचीन यूनान में अवकाश के स्थलों को ही विद्यालय के नाम से संबोधित किया जाता था। अवकाश काल को ही 'आत्म -विकास' समझा जाता था। जिसका अभ्यास अवकाश नाम निश्चित स्थान पर किया जाता था। धीरे–धीरे यह अवकाश स्थल एक निश्चित उद्देश्य तथा पाठ्यक्रम का ज्ञान प्रदान करने वाली संस्थाएं अर्थात स्कूल बन गए। भारत में कई स्कूल हैं। देश के स्कूलों की एक छोटी सी सूची यहां लिखी है। आचार्यश्रीजी के अनुसार विद्यालय के विषय में कहते हैं –
- "कर्मभूमि की धरती ही शिक्षा का केन्द्र है।"
- उत्साह के साथ मंदिर बनाना अलग वस्तु है और ये सरस्वती मन्दिर बनाना अपने आप में महत्त्वपूर्ण होता है।
- **विद्यालय का स्वरूप –** "उपाश्रम के परिसर में कसकर परिश्रम हो" (मूकमाटी 42) आचार्य विद्यासागरजी ने विद्यालय को एक उपाश्रम की संज्ञा देते हुए, उसे एक पवित्र स्थान माना है और कहा है कि विद्यालय वह प्रयोगशाला है, जहाँ विद्यार्थी के द्वारा कसकर परिश्रम किया जाता है और कुशल शिल्पी उसे प्रतिपल तराशकर जीवन के निर्माण की कला सिखाता है।
- "आज विद्यालय तो बहुत हैं लेकिन रचनात्मक कार्य कोई नहीं हुए। पाठशाला या विद्यालय जाने से ही अध्ययन नहीं होता किन्तु प्राकृतिक वातावरण के बीच में तथा प्रकृति की गोद में रहने से बहुत कुछ सीख जाते हैं। (11 फरवरी, 2014 रामटेक)
- आचार्यश्रीजी के अनुसार विद्यालय का वातावरण व्यवस्थित तथा संस्कारमय होना चाहिए, क्योंकि ऐसा वातावरण उल्लास, उमंग तथा सृजनात्मकता का प्रतीक है। जो विद्यार्थी को सर्वांगीण विकास (शारीरिक, मानसिक व आध्यात्मिक) की प्रेरणा देता है और यह तभी संभव है, जब उसे शिक्षण के अनुकूल प्राकृतिक व आदर्श वातावरण मिले। "उत्साह के साथ मंदिर बनाना अलग वस्तु है और ये सरस्वती मन्दिर बनाना अपने आप में महत्त्वपूर्ण होता है।" (16 फरवरी, 2014, रामटेक)
- आचार्यश्रीजी का मानना है कि मन्दिर बनाने से सीमित वर्ग व सम्प्रदाय के व्यक्ति ही लाभ उठा पाते हैं, किन्तु विद्यालय एक ऐसा पावन व पवित्र स्थल होता है, जहाँ विद्यार्थी ही नहीं परिवार, समाज व राष्ट्र भी लाभ प्राप्त करते हैं क्योंकि विद्यालय ज्ञानरूपी प्रकाश का स्रोत है, जिसके प्रकाश से प्रत्येक प्राणी प्रकाशित होता है। अतः विद्यालय के आदर्श का निर्माण करना सर्वश्रेष्ठ है।

- **विद्यालय के सम्बन्ध में आचार्यश्रीजी के विचार बड़े स्वस्थ व परोपकारी हैं, जिसे वे विद्या का मंदिर व एक पवित्र स्थान मानते हैं, उसकी संरचना के सम्बन्ध उनका कहना है –**
- **विद्यालय के सदन की ऊँचाई न अधिक व न कम होनी चाहिए, जिससे विद्यार्थियों को पर्याप्त प्राकृतिक हवा व प्रकाश प्राप्त हो और कृत्रिम साधनों का उपयोग न करना पड़े।**
- **कक्षा-कक्ष न अधिक बड़ा और न अधिक छोटा हो और उसकी बैठक इस प्रकार की हो कि शिक्षक का ध्यान सभी विद्यार्थियों पर केन्द्रित रहे और शिक्षक की आवाज को प्रत्येक विद्यार्थी आसानी से सुन व समझ सकें।**
- **विलासिता की हवा से दूर शांत, प्राकृतिक स्थान में शिक्षा दी जाये, जहाँ शिक्षक के संरक्षण में रहकर अपना सर्वांगीण विकास कर सकें ।**
- **विद्यालय के विविध रूप –**
- **विद्यालय एक उपाश्रम है।**
- **विद्यालय एक सौहाद्रपूर्ण वातावरण है।**
- **विद्यालय एक संस्कारों का उपनयन है।**
- **विद्यालय एक विद्या का मंदिर है।**
- **विद्यालय एक विद्यार्थी केन्द्रित शोध का स्थान है।**
- **विद्यालय एक खेल का मैदान है।**
- **विद्यालय एक जीवन निर्माण की प्रयोगशाला है।**
- **विद्यालय एक संस्कृति संरक्षण है।**
- **विद्यालय एक धर्म के बीज का अंकुरण है।**
- **अनुशासन – अनुशासन अर्थात् व्यवस्थित, संयमित, नियंत्रित,धैर्यपूर्वक, नियमित और विनियमित तरीके से जीवन यापन करना है। यह व्यक्ति को समय, सामग्री और संसाधनों का उचित उपयोग करने में मदद करता है। अनुशासन व्यक्ति को संगठित रखता है और उसे निरंतर उन गतिविधियों में ले जाता है जो सफलता के लिए आवश्यक हैं। इसके बिना जीवन अव्यवस्थित, अनियमित और अव्यवहारिक है।**
- **आचार्यश्री विद्यासागरजी महाराज के अनुसार अनुशासन इस प्रकार है-**
- **"अनुशासन का अर्थ केवल नियमावली पालने से ही नहीं, बल्कि अपने व्यवहार, कर्तव्य और दायित्व को अच्छी तरह समझना है।"**
- **"पाँच पापों को सीमित करना ही अणुव्रत है। शिक्षा अलौकिक ही नहीं आध्यात्मिक शिक्षा के साथ-साथ हम धर्म से जुडना चाहते हैं।"**

- "मात्र दमन की प्रक्रिया से कोई भी क्रिया सफल नहीं होती।"
- "हृदय से किए गए प्रायश्चित से बढ़कर कोई सजा नहीं।"
- "मन के ऊपर घन पटकने वाले हम ही हैं। आत्मा को तो बतायेंगे, लेकिन मन के ऊपर तो घन पटकना होगा हमें, क्योंकि मन हिंसक होता है स्वयं ही मर जाता है तथा दूसरों के लिए मरवा देता है ऐसे मन को आप काबू में रखें आप की शिक्षा बहुत कीमती होगी। ध्यान रखो सबसे ज्यादा कमजोर और अनिष्टकारी कार्य हो सकता है तो वह मन के माध्यम से यही शिक्षा सभी ग्रंथों में दी है।"

(रामटेक, 13.02.14)

- जो अनुशासन में रहता है वह खरा उतरता है, अनुशासन कठोर-सा लगता है लेकिन सुरक्षा के लिए यह आवश्यक है।

(रामटेक, 24.02.14)

- शिक्षक का छात्रों से कठोर व्यवहार नहीं होना चाहिए, यदि कठोर व्यवहार होगा तो छात्र डरेंगे और डर के कारण वह विषय वस्तु ग्रहण नहीं कर पाएँगे। अतः शिक्षकों का छात्रों से मधुर व्यवहार होना चाहिए ताकि वे आत्मीयता से अपनी विषय वस्तु स्पष्ट रूप से रख सकें जिससे छात्रों के बौद्धिक व तार्किक स्तर में वृद्धि हो सके। (रामटेक, 27.4.06)
- "अनुशासन शासन की शान है" आचार्यश्रीजी कहते हैं कि विद्यालय अध्ययन का ही स्थान नहीं बल्कि बालकों के व्यक्तित्व के विकास में भी सहयोगी है। व्यक्ति, घर, परिवार, समाज व देश की मर्यादा का पालन करता है, तो वह परिपक्व योग्य नागरिक बनता है। अनुशासन पालन करना वास्तव में कठिन कार्य है किन्तु अनुशासन से व्यक्ति व समाज की सुरक्षा भी रहती है। (24 जनवरी 2012 रामटेक)
- "लक्ष्मण रेखा का उल्लंघन रावण हो या सीता हो, राम भी क्यों न हो दंडित करेगा ही!"

मूकमाटी (पृ. 217)

- सामान्यतया अनुशासन का शाब्दिक अर्थ नियमों के अनुकूल चलना है लेकिन आचार्य विद्यासागर जी ने अनुशासन के अंतर्गत आत्मसंयम, आज्ञापालन, कर्तव्य पालन, विनयशीलता व नियमशीलता आदि जैसे गुणों को भी समाहित किया है।
- चाहे आप पढ़ो या लिखो या बोलो, सभी जगह व्याकरण को ध्यान में रखना आवश्यक होता है। जब बोलने, सुनने के लिए अनुशासन की आवश्यकता है तो लोकव्यवहार हो या अलौकिक कार्य के लिए अनुशासन बहुत आवश्यक है।
- अनुशासन एक अनिवार्य प्रश्न होता है जिसके बिना पूरा प्रश्न पत्र हल कर भी दोगे तो अंक नहीं मिल सकते, क्योंकि इसमें समझौता नहीं होना चाहिए।

- अनुशासन के बिना किसी भी विद्यालय का कार्य सुचारू रूप से चल नहीं सकता क्योंकि विद्यार्थी को अपने चारों ओर के वातावरण के अनुकूल करने तथा अध्ययन करने के कार्य में ध्यान केन्द्रित करने के लिए अनुशासन परम आवश्यक है।
- आचार्यश्रीजी कहते हैं कि अनुशासन व मानव जीवन का घनिष्ठ सम्बन्ध है। जिस प्रकार शक्कर दूध में घुल मिल जाती है और दूध रूप परिवर्तित हो जाती है उसी प्रकार अनुशासन को जीवन के साथ मिला लेना चाहिए।
- किसी भी विद्यार्थी के जीवन में तभी निखार आ सकता है, जब वह अनुशासन से ओत-प्रोत हो। अनुशासन के बिना विद्यार्थी कभी भी अपनी मंजिल प्राप्त नहीं कर सकता, जिस प्रकार बिना ब्रेक की गाड़ी और बिना लगाम का घोड़ा अपनी मंजिल पर नहीं पहुँचता उसी प्रकार बिना अनुशासन के विद्यार्थी अपने लक्ष्य को नहीं पा सकते हैं।
- विद्यार्थी अनुशासन रूपी दो तट से बंधा होना चाहिए। स्व अनुशासन व पर अनुशासन; स्व अनुशासन के लिए मात्र संकल्प की आवश्यकता है और पर अनुशासन जो परम्परागत रूप से चला आ रहा है, जिसका पालन न करने पर दंड दिया जाता है।
- **स्त्री शिक्षा –** आचार्यश्री विद्यासागरजी महाराज ने स्त्री को शिक्षित और आगे बढ़ने के लिए प्रेरित किया है। आचार्यश्री का कहना है -यदि स्त्री शिक्षा होगी तो हमारी भावी पीढ़ियां संस्कारित और शिक्षित होगी। स्त्री शिक्षा के विषय में आपके सूत्र वाक्यों को यहाँ लिख रहे हैं –
- कन्या उभयकुल वर्धिनी है, उसे शिक्षित व संस्कारित करना आवश्यक है।'
- स्त्री शिक्षा का मूल उद्देश्य मात्र नौकरी नहीं।'
- कला कन्या का आभूषण है।"
- **पर्यावरण शिक्षा –** आचार्यश्री विद्यासागरजी महाराज जीव मात्र के प्रति प्रेम रखने की बात कहते हैं। उनका कहना है कि प्रत्येक जीव से प्रेम करो। प्रकृति आनंद दायक है, इसका आनंद लो। नाश मत करो। प्रकृति प्रदत्त वस्तुओं का सदुपयोग करो। इस संबंध में उन्होंने निम्न सूत्रवाक्य कहे हैं –
- जंगलों को बचाओ तभी शुद्ध वातावरण होगा।
- जलचर, थलचर और नभचर प्राणियों के प्राण न लें, उन्हें उन्मुक्त रहने दें।
- प्रकृति की संतानों की हिंसा न करें, उन्हें प्रेम करें।
- भोजन के लिए निर्धारित वस्तुओं को ही खाए, प्रकृति के विपरीत वस्तुओं को छोड़े।
- व्यक्ति की विलासिता और आडम्बरपूर्ण जीवन शैली से ही प्रकृति की संपदा नष्ट हो ही है।

- पर्यावरण और स्वास्थ्य को ठीक रखना ही मानव जाति का विकास है। पर्यावरण को बिगाड़ कर हम अपने स्वास्थ्य को जिंदा नहीं रख सकते है।
- प्रकृति के विपरीत चलना साधना की रीत नहीं या फिर प्रकृति में रहो, लेकिन प्रकृति के अनुसार रहो ।
- **दार्शनिक चिंतन** – आचार्यश्री विद्यासागरजी महाराज अन्तर्मुखी व्यक्तित्व के धनी है। प्रत्येक विषय के शोध के लिए वे तत्पर होते हैं। किसी भी प्रकार की अनधिकृत टिप्पणी नहीं करते हैं। उनकी चिंतनधारा दार्शनिक विचारधारा का मूलस्रोत है। आचार्यश्री के विविध दार्शनिक विचारों को यहां उद्घाटित करते हैं–
- आत्मतत्व की खोज के लिए स्वयं को तपना पड़ता है। निरंतर सजग रहना होता है।
- जब तक आत्मा खाल में है तब तक ख्याल में नहीं है।
- अंदर के भाव संभल जायेंगे तो बाहर अपने आप सब ठीक हो जायेगा।
- मनुष्य जीवन के प्रति अत्यंत सकारात्मक रवैया के साथ आपने मनुष्य जीवन की सार्थकता त्याग, तपस्या, अपरिग्रह, ब्रह्मचर्य, सरलता, सहजता, मधुरता, मृदुता, पवित्रता, निर्मलता, सत्य ज्ञान, संयम आदि से बतायी है।
- पाप से निवृत्ति और पुण्य में प्रवृत्ति यही सूत्र प्रदान किया।
- आचार्यश्री विद्यासागरजी महाराज के दार्शनिक भावों को समझने के लिए तत्व मीमांसा, ज्ञान मीमांसा और मूल्य मीमांसा के विषय के आधार पर समझ सकते हैं।
- तत्व मीमांसा – आचार्यश्री विद्यासागरजी महाराज दिगम्बर जैन आचार्य है। आप वर्तमान में वरिष्ठतम आचार्य हैं। जैन दर्शन के प्रति अपार श्रद्धा के धारी है। आप ईश्वर की सत्ता को स्वीकार करते हैं और ईश्वर को कर्ता के रूप में न मानकर उन्हें अपने कल्याण का निमित्त मानकर उनकी आराधना करते हैं। वे कर्म सिद्धान्त को ही मानते हैं। आचार्यश्री कहते है – कोई जीव किसी जीव का कर्ता नहीं है क्योंकि प्रत्येक जीव को अपने शुभ–अशुभ कर्मों का फल स्वयं ही भोगना है अन्य कोई नहीं भोगेगा। यह संसार अनादि काल से है और अनंत काल तक रहेगा। अहिंसा धर्म का पालन सबसे महत्तवपूर्ण है।
- कर्म आठ हैं –ज्ञानावरण, दर्शनावरण, वेदनीय, मोहनीय, आयु, नाम, गोत्र, अन्तराय। इन कर्मों के आधार पर जीव का शुभाशुभ फल मिलता है।
- कर्म को हटाने के लिए तीन उपाय है – क्षय, क्षयोपशम और उपशम।
- कर्मों के आवरण के लिए ओढन्ने और हटाने के लिए सात तत्व साहयक है –जीव, अजीव, आस्रव, बंध, संवर, निर्जरा, मोक्ष।
- आत्म तत्व की खोज के लिए स्वयं को स्वयं से जोडन्ना।
- **ज्ञान एवं तर्क मीमांसा** – आचार्यश्री विद्यासागरजी महाराज बताते हैं कि –

- **आत्मा में अनंत शक्ति है और यह शक्ति चार रूपों में है – अनंत दर्शन, अनंत ज्ञान, अनंत सुख और अनंत वीर्य। आत्मा की इस शक्ति को प्रकट करने के लिए कर्मों का क्षय करना पड़ेगा और कर्मों का क्षय करने लिए मंद कषाय, स्वाध्याय, तप, संयम, अनुशासन रखना पडेगा।**
- **पाँच प्रकार के ज्ञान है – मतिज्ञान, श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान, मनःपर्यय ज्ञान और केवल ज्ञान। मतिज्ञान और श्रुतज्ञान एकेन्द्रिय से लेकर पांच इन्द्रिय तक के जीवों में अनिवार्य रूप से होता है। ये दोनों ज्ञान जीव जानने, देखने, समझने और निर्णय लेने में मदद करते हैं। इन्हीं ज्ञानके आधार पर आत्म तत्व की खोज की जाती है।**
- **मूल्य एवं आचार मीमांसा – आचार्यश्री विद्यासागरजी महाराज ने स्वयं में मूल्य और आचार मीमांसा के स्वरूप को अपने आप में उतारकर बताया है, स्वयं उसका उदाहरण प्रस्तुत किया है। आज वे मूल्य और आचारण के जीवंत संत है। उनकी मूल्य परक शिक्षा है –**
- **राष्ट्र के प्रति समर्पण, ईमानदारी और कर्तव्यनिष्ठता रखो।**
- **अपने चरित्र को उज्जवल बनाओ।**
- **स्त्री के प्रति निर्मल भावों को रखो।**
- **भारतीय संस्कृति पर गौरव करो।**
- **मद्य, मांस और मधु जैसे अभक्ष्य पदार्थों के सेवन से बचो।**
- **शिक्षा के प्रति सजग रहे, शिक्षा हीआपका जीवन बदलेगी।**
- **पंचेन्द्रियों के विषयों में प्रवृत्ति से बचो।**
- **उपसंहार – आचार्यश्री विद्यासागरजी महाराज इस सदी के श्रेष्ठतम संत हैं। उन्होंने अपनी तपश्चर्या, सार्वभौमिक दृष्टिकोण, चरित्रबल और आत्मनियंत्रण के आधार पर सम्पूर्ण विश्व में मानवीयता और नैतिकता की अलख जगायी है। भारतीय दशर्न में अनेक विद्वानों, ऋषि मुनियों का शिक्षा दर्शन प्रेरणीय है परंतु आचार्यश्री विद्यासागरजी महाराज का शिक्षा दर्शन प्रेरणीय के साथ-साथ अनुकरणीय भी है। तभी तो आपके पीछे लाखों की संख्या में शिष्य-प्रशिष्य, श्रावकगण चल रहे हैं।**

संदर्भ ग्रंथ सूची –

- जैन डा सपना 2016 "आचार्य विद्यासागर के शैक्षिक विचार " शोध प्रबंध नवजीवन पब्लिकेशन निवाई (टोंक- राजस्थान)।
- जैन सारिका 1992 "आचार्य विद्यासागर के व्यक्तित्व एंव शैक्षिक विचारों का अध्ययन ", शोध प्रबंध, शिक्षा संकाय, डां. हरीसिंह गौर विश्वविद्यालय, सागर (म.प्र.)
- जैन किरण 1992 "जैनदर्शन के संदर्भ में आचार्य विद्यासागर के साहित्य का अनुशीलन", शोध प्रबंध, हिंदी विभाग, डां. हरीसिंह गौर विश्वविद्यालय सागर(म.प्र.)

- जैन प्रतिभा 1992 "आचार्य विद्यासागर जी की कृति मूकमाटी का शैक्षिक अनुशीलन ", शोध प्रबंध हिंदी विभाग, डां.हरीसिंह गौर विश्वविद्यालय सागर (म.प्र.)
- जैन बारेलाल,1992 "हिंदी साहित्य की संत काव्य परंपरा के परिक्षेप में आचार्य विद्यासागर के कृतित्व का अनुशीलन", हिंदी विभाग, अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय, रीवा(म.प्र.)
- जैन विमल कुमार 1993 "महामनीषी श्री आचार्य विद्यासागर के जीवन अंव साहित्यक अवदान ", शोध प्रबंध हिंदी विभाग, जाकिर हुसैन कालेज-- दिल्ली विश्वविद्यालय- दिल्ली।
- जैन चंद्रकुमार 1997 "आचार्य विद्यासागर कृत मूकमाटी महाकाव्य का सांस्कृतिक अनुशीलन " शोध प्रबंध, हिंदी विभाग- पंडित रविशंकर विश्वविद्यालय रायपुर(छ.ग.)
- जैन सुनीता 2002 "आचार्य विद्यासागर की लोकदृष्टि और उनके काव्य का कलागत अनुशीलन " शोध प्रबंध हिंदी विभाग बरकतउल्ला विश्वविद्यालय भोपाल (म.प्र.)
- जैन रश्मि 2003 "आचार्य विद्यासागर जी के साहित्य में उदात्त मूल्यों का अनुशीलन ", शोध प्रबंध, हिंदी विभाग –डां. हरीसिंह गौर विश्वविद्यालय सागर (म.प्र)।
- अग्रवाल- जे. सी. 2007 "भारत में शिक्षा व्यवस्था का विकास", क्षिप्रा पब्लिकेशन, दिल्ली।
- जीत, भाई योगेंद्र, 1998 "शिक्षा में नवाचार एंव नवीन प्रवृत्तियां", विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा (यू.पी.)।
- मिश्र, आत्मानंद, 1976 "भारतीय शिक्षा के प्रवर्तक",विनोद पुस्तक मंदिर- आगरा (यू.पी.)।
- कुलश्रेष्ठ, एस.पी.(1982), शैक्षिक तकनीकी के मूलाधार, विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा।
- पांडे,बी.बी.(1994), शैक्षिक और सामाजिक अनुसंधान एवं सर्वेक्षण, वसुंधरा प्रकाशन, गोरखपुर।
- मिश्र, ए.(1976), भारतीय शिक्षा के प्रवर्तक, विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा।
- जैन, बी. एल. (1993) हिन्दी साहित्य की संत काव्य परम्परा के परिप्रेक्ष्य में आचार्य विद्यासागर के कर्तृत्व का अनुशीलन, पी-एच.डी., अवधेश प्रताप सिंह विश्व विद्यालय, रीवा।
- जैन, के (1993) जैन दर्शन और मुनि श्री विद्यासागर, आदित्य प्रकाशन, बीना जैन, पी. (1993) आचार्य विद्यासागरजी की कृति मूकमाटी' का शिक्षक अनुशीलन, एम.एड. लघु शोध प्रबंध, डॉ हरीसिंह गौर विश्व विद्यालय, सागर
- जैन, सी. (1997) आचार्य विद्यासागर कृत मूकमाटी का सांस्कृतिक अनुशीलन, पी-एच.डी., पं रवि शंकर शुक्ल विश्वविद्यालय, रायपुर
- दुबे, एस. (2002) आचार्य विद्यासागर की लोक दृष्टि और उनके काव्य का कलागत अनुशीलन, पी-एच. डी., बरकतउल्लाह विश्वविद्यालय, भोपाल।

- कश्यप, आर. (2002) महर्षि अरविन्द के साहित्य में निहित शैक्षिक तत्त्वों का अध्ययन, एम.एड. लघु शोध प्रबंध, देवी अहिल्या विश्व विद्यालय, इंदौर
- डिसिल्वा, आई. (2003) जे. कृष्ण मूर्ति के साहित्य में निहित शैक्षिक चिंतन, एम.एड. लघु शोध प्रबंध, देवी अहिल्या विश्व विद्यालय, इंदौर
- पाल, वाइ. (2005) राष्ट्रीय पाठ्यचर्या रूपरेखा, नई दिल्ली-एन.सी.ई.आर.टी
- जैन, एस. (2013). आचार्य प्रवर श्री विद्यासागर जी के शैक्षिक विचारों का अध्ययन, मेरठ, वनस्थली विद्यापीठ,
- सिंह, ए. (2013). मदन मोहन मालवीय का शैक्षिक दर्शन एवं सामाजिक परिप्रेक्ष्य का एक समीक्षात्मक अध्ययन, इंदौर, एम. एड. लघु शोध, देवी अहिल्या विश्व विद्यालय, इन्दौर
- तोमर, एल. (2013) भारतीय शिक्षा के मूल तत्त्व, नईदिल्ली-सुरुचि प्रकाशन सक्सेना, एन.आर. (2014) शिक्षा सिद्धान्त, मेरठ-आर. लाल बुक डिपो
- जैन. सु. (2017). विद्याधर से विद्यासागर, जैन विद्यापीठ सागर
- क्षुल्लक धैर्यसागरजी (2017). सर्वोदयी संत की राष्ट्रीय देशना. जयपुर भगवान ऋषभदेव ग्रन्थमाला।
- पूर्णमति (2017) गुरु से सुना वही चुना, जैन विद्यापीठ, सागर।
- पाटिल, टी. (2017) शिक्षक, शिक्षा और संस्कार, पुणे, टेक-मेक्स पब्लिकेशन।
- आचार्य राम मूर्ति त्रिपाठी डॉ. प्रभाकर माचवे, (दि.न.). मूकमाटी मीमांसा. भारतीय ज्ञानपीठ नयी दिल्ली।
- ऋजुमति माताजी. (दि.न.). मेरे सपनों का भारत, वीरोदय साहित्य प्रकाशक, राहतगढ़ जिला सागर।
- प्रतिभामंडल (दि.न.). विद्या की परछाइयाँ, विकास ऑफसेट प्रिंटर्स एण्ड पब्लिशर, भोपाल।
- निर्वेगसागर (दि.न.). उपाश्रम के छाँव में. डॉ. भरत जैन, धर्मोदय साहित्य प्रकाशन, खुरई रोड, सागर।

- 154, गीतांजलि ग्रीनसिटी,
संजय ड्राइव रोड़, सागर
9329092390